आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबन्धों का मूल्यांकन

डॉ0 शम्स आलम,
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बी. वी. एम. (पी. जी.) कालेज, बाह (आगरा)

भारत एक महान व अद्भुत देश है। ऐसा इस कारण से क्योंकि प्राचीन काल से लेकर आज तक भारत देश ने संसार के अन्य देशों की तुलना में अधिक बाह्य समस्याओं का सामना किया है। मगर इस उहापोह में भारतीय संस्कृति का आधार रूप या कहें कि मूलरूप यथावत् ही बना रहा। हालांकि एक भारतीय विशेष पर कुछ न कुछ विदेशी प्रभाव समय के तकाजे को दृष्टिगत रखते हुए अपरिहार्य रूप से पड़ा लेकिन आज भी एक सामान्य भारतीय किसी न किसी कोण से अपनी मूल संस्कृति से ही जुड़ा है। इसी तरह यह भी सत्य है कि भारतीय परिवेश में ही अन्य बाह्य संस्कृतियाँ भी समांगीकृत हो गईं और भारत विभिन्नता में ठोस एकता रखने वाला अखण्ड देश बन गया। जबकि अन्य देश अपनी संस्कृति का सर्वाधिक, शत प्रतिशत कहें तो सही होगा, तत्व रखने के बावजूद स्थायित्व के तत्व से काफी पीछै हैं।

निबन्ध शब्द का अर्थ यदि दृढ़ बन्धन अथवा बन्धन युक्त होता है तो दलित के साथ निबन्ध शब्द का प्रयोग नहीं होना चाहिए। लालित्य और ललित दोनों इतने कोमल होते हैं कि वे भूषण भार सम्हालने में असमर्थ बिहारी की नायिका के समान बन्धन का काठिन्य सहन नहीं कर सकते –

भूषण भार सम्हारिहैं, क्यों ये तन सुकुमार।
सूधे पांय न धरि परत, सोभा ही के भार।।

ललित निबन्ध को परिभाषा की सीमा में बांधने का प्रयास डॉ. आर. पी. चतुर्वेदी ने इन शब्दों के द्वारा किया है – ''ललित निबन्धों में 'पर' की अपेक्षा 'स्व' का महत्व अधिक रहता है। किसी विषय के स्पष्टीकरण व शास्त्रीय प्रतिपादन के लिए प्रस्तुत कृतियां इन निबन्धों से अलग प्रबन्ध या लेख कही जायेंगी। कभी–कभी इन विषय परक रचनाओं को अलग करने की दृष्टि से वास्तविक निबन्धों को 'ललित निबन्ध' भी कहा जाता है। 'ललित साहित्य' में साहित्य की वे सब कोटिया आयेंगी, जिनमें बोध पक्ष उतना प्रधान नहीं, जितना भाव पक्ष अर्थात् जिनमें बुद्धि की अपेक्षा हृदय को स्पर्श करने की सामर्थ्य अधिक है। गद्य और पद्य दोनों में ही ललित साहित्य की सृष्टि सम्भव है, शर्त है–लालित्य अर्थात् सौन्दर्यनिष्ठा।''[1] ललित निबन्ध की परिभाषा से पूर्व हिन्दी निबन्ध की परिभाषा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में जान लेना परम आवश्यक है – ''व्यक्तिगत विशेषता का यह मतलब नहीं कि अनुभूति की प्रवृत्ति और लोकमान्य स्वरूप में कोई सम्बन्ध ही न रहे अथवा भाषा से सरकस वालों की सी कसरतें या हठयोगियों के आसन कराये जायें, जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवा कुछ नहीं।''[2] गद्य के विकास काल में 'ललित निबन्ध' शब्द तो प्रचलित नहीं था, परन्तु पहला ललित निबन्धकार सरदार पूर्ण सिंह को माना जा सकता है।[3] डॉ. कैलाश चन्द्र शर्मा के शब्दों में – ''निबन्ध अब भी अपने विकास क्रम में है। उसे किसी परिभाषा में आबद्ध करना न्याय संगत न होगा और उसके स्वरूप निर्धारण में भी पूर्णतः न्याय न हो सकेगा। समीक्षकों ने निबन्धों को विषय भाव और शैली की दृष्टि से विभाजित किया है और कुछ विद्वान निबन्ध का वर्गीकरण भावात्मक, विचारात्मक,

वर्णनात्मक तथा कथात्मक रूपों में करते हैं। अनुभूति प्रवणता एवं रसात्मक बोध वाले ऐसे निबन्ध जो सर्जनात्मक साहित्य की कोटि में आते हैं और जिनका इधर प्रचलन बढ़ा ही नहीं है, समादृत भी हुए हैं। ललित निबन्ध की कोटि में आते हैं।''[4]

हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार – ''ललित निबन्ध में उस वृत्ति की प्रधानता रहती है, जिसे भरतमुनि ने 'नाट्य शास्त्र' में 'क्रीडनीयक' कहा है। विश्रांतिजनन अथवा विनोदकरण ललित साहित्य का अन्य हेतु कहा गया है। यह निश्चित है कि ललित साहित्य में कलात्मक, सौन्दर्य तत्व, कल्पना–विकास, भावना–परिष्कार आदि का महत्व अधिक है।''[5] विषयपरक गम्भीर विवेचनात्मक निबन्धों से ललित निबन्ध का माहौल भिन्न होता है। इसमें निबन्धकार का आत्मिक बोध प्रमुख रहता है। किसी अदना से विषय के साथ जुड़कर कभी वह संस्कृति की अतल गहराई में उतरता है, कभी लोकमानस की सहजता में रमण करता है और कभी एकदम नये अर्थ, नई छवि तथा अनुभूति का साक्षात्कार करता है। ललित निबन्ध की भाषा का भी तेवर तेजी से बदलता रहता है। कहीं तत्सम शब्दों की छटा, कहीं तद्भव एवं ग्रामीण शब्दों का ठाट और कहीं व्यंग्य से अन्तर को बेधने वाली पैनी धार निबन्ध की भाषा में दिखाई देती है। भारतेन्दु युग में लिखे गये निबन्धों की व्यक्ति निष्ठा, रोचकता तथा सजीवता में ललित निबन्धों का पूर्व रूप निर्मित हो गया था।[6] हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी मौलिक प्रतिभा से इस परम्परा को एकदम नये रूप में ढाल दिया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी उच्चकोटि के निबन्धकार हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य के गहन अनुशीलन से उन्होंने जो कुछ प्राप्त किया है उसे अपने व्यक्तित्व की सहजता से जोड़कर सुग्राह्य बना दिया। द्विवेदी जी की दृष्टि बड़ी पैनी है। उसमें सारग्राहणी शक्ति है। शुष्क से शुष्क विषय जो उन्हें जंच जाता है बुद्धि और हृदय का योग पाकर सरस हो उठता है। पाठक उनके साथ संस्कृति की गहराई में उतरता जाता है और अमूल्य रत्नों को खोजकर लाता है बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान द्विवेदी जी चुटकी बजाते कर देते हैं। उनके विचारों, भावों तथा अभिव्यक्ति में कहीं भी उलझन नहीं रहती। निबन्धों के बीच मानवीय जिजीविषा, शक्ति और विकास की ललक परिलक्षित होती है।[7] विचारों के अनुकूल भाषा का प्रयोग द्विवेदी जी की विशेषता है। लालित्य इनके निबन्धों का प्रधान गुण है। साहित्य, संस्कृति और भाषा की समस्याओं पर आपने अनेकों श्रेष्ठ निबन्ध लिखे हैं। द्विवेदी जी अपने निबन्धों में जैसे गम्भीर और प्रौढ़ विचारों का प्रयोग करते हैं, भाव का वैसा ही सौन्दर्य तथा भाषा की वैसी ही सुन्दरता उनके निबन्धों में दृष्टिगोचर होती है। निबन्धों में विषयानुसार शैली का प्रयोग करने में द्विवेदी जी को अद्भुत क्षमता प्राप्त है। शैली के अनुसार ही संस्कृत के तत्सम शब्दों से लेकर ठेठ ग्रामीण जीवन के शब्दों का प्रयोग इनके शिल्प सौन्दर्य में वृद्धि करता है। विषयगत विविधता द्विवेदी जी के निबन्धों को सर्वत्र प्राप्त है। विविध विषयों से सम्बन्धित निबन्ध आपके 'अशोक के फूल', 'विचार और वितर्क', 'कल्पलता', 'मध्यकालीन धर्म साधना', 'कुटुज' आदि निबन्ध संग्रहों में संग्रहीत है तथा जो हिन्दी निबन्ध साहित्य की अक्षयनिधि है।

पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबन्धों में वे सभी विशेषताएं पायी जाती हैं जो ललित निबन्ध के लिए अपेक्षित हैं। व्यक्तित्वाभिव्यंजन से लेकर पाण्डित्य की धाक जमाने और भाषा एवं पद–संघटन के क्षेत्र में रेशमी धागों से बुनी सुषमा के दर्शन कराने का श्रेय आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को दिया जा सकता है। द्विवेदी जी के निबन्धों में विचार, भाव एवं भाषा का अद्भुत समन्वय देखा जाता है। इस विषय में डॉ. हरिनाथ द्विवेदी ने लिखा है – ''द्विवेदी जी ने निबन्ध को न केवल पूरी सहायता से अपनाया है,

बल्कि इसे शून्योच्छ्वासों या प्रत्ययपरक चिन्तन से मुक्त रखा है। विचारों की जैसी प्रौढ़ता, भावों का वैसा ही विलास तथा भाषा का भी वैसा ही शिल्पगत वैभव उनके निबन्धों में देखने में आता है।''[8] द्विवेदी जी को हिन्दी निबन्ध जगत में वही स्थान प्राप्त है जो उपन्यास जगत में प्रेमचन्द जी को। इनके निबन्धों में गुरूता, ऋजुता एवं विनोद प्रियता की त्रिवेणी लहराती प्रतीत होती है आपके निबन्धों में एक ओर यदि सनातन वाङ्मय का मन्द गम्भीर स्वर सुनाई पड़ेगा तो दूसरी ओर से संस्कृत के सुकुमार काव्यों जैसा शब्द शिल्प–माधुर्य रस घोल देता है।

द्विवेदी जी का निबन्ध साहित्य भारतीय सांस्कृतिक चेतना से सम्पन्न है। उन्होंने संस्कृत साहित्य का गहन अध्ययन कर वर्तमान को नव चेतना का संदेश दिया है। 'जीवेम शरदः शतम्'[9] निबन्ध भी सांस्कृतिक परम्परा का निबन्ध है। लेखक ने उपनिषद की प्रार्थना जीवेम शरदः शतम् कि 'मैं सौ वर्ष तक अदीन होकर जीता रहूं' को निबन्ध का प्रतिपाद्य विषय बनाया है। इस निबन्ध के माध्यम से अतीत और वर्तमान का समाज प्रतिबिम्बित हो रहा है। वर्तमान का मनुष्य सौ वर्ष तक जीवित रहने की इच्छा तो करता है परन्तु अतीत के मनुष्य के समान वह उद्यम नहीं करना चाहता। वर्तमान पीढ़ी आलस्य और प्रमाद के कारण दैनिक कार्य प्रणाली को वैज्ञानिक रूप देने में असमर्थ रही है। यह निबन्ध शिक्षाप्रद होने के साथ–साथ वर्तमान पीढ़ी को प्रोत्साहित करने वाला है। इस निबन्ध में लेखक ने मानव जीवन का उद्देश्य, दृढ़ कर्म–शक्ति की आवश्यकता, संयम एवं इन्द्रिय निग्रह पर बल, भ्रष्टाचार एवं चरित्र–हीनता पर प्रकाश, सामूहिक शक्ति पर बल आदि को रेखांकित किया है।

'शिरीष के फूल'[10] निबन्ध में द्विवेदी जी ने गहन चिन्तन, प्रखर पाण्डित्य और सांस्कृतिक चेतना का परिचय दिया है। इसमें उन्होंने प्राकृतिक परिवेश के सूक्ष्म निरीक्षण और ऐतिहासिक सन्दर्भों का गहन अनुशीलन प्रस्तुत किया है। 'शिरीष के फूल' की गणना द्विवेदी जी के सर्वश्रेष्ठ निबन्धों में की जाती है। इसमें लेखक के गहन चिन्तन, मनन और कलात्मक भाव बोध का दर्शन होता है। इसमें भावुकता, गम्भीरता और वचन वक्रता का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। यहाँ निबन्धकार की बहुमुखी प्रतिभा और सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का अपूर्व विन्यास है। शिरीष के फूल के माध्यम से उन्होंने अपने व्यक्तित्व की व्यापक अभिव्यक्ति की है। वैयक्तिकता के भाव ने निबन्ध में तादात्म्य और गहनता का समावेश करा दिया है इस निबन्ध में प्रकृति–प्रेम, मानवतावाद, सांस्कृतिक बोध, साहित्यिक चेतना और युग चेतना का दुर्लभ संयोग घटित हुआ है। लेखक के कवि हृदय की भी यहाँ पग–पग पर अनुभूति होती है। उन्होंने संस्कृत साहित्य का गहन अनुशीलन कर शिरीष के फूल के विषय में जो तथ्य उपस्थित किये हैं, वे उनकी गवेषणात्मक दृष्टि के संकेतक हैं। स्थान–स्थान पर दार्शनिक चिन्तन के पुट ने निबन्ध को पर्याप्त गहनता प्रदान की है। भाषा की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट निबन्ध है। लालित्यपूर्ण भाषा–शैली के कारण निबन पठनीय और चिरस्मरणीय हो गया है।

'भारतीय संस्कृति की देन'[11] नामक निबन्ध में लेखक ने भारतीय संस्कृति के यथार्थ रूप को वैज्ञानिक रीति से हमारे सामने प्रस्तुत किया है। संस्कृति को सार्वजनीनता का पक्ष दिखाकर एक अमूल्य विश्व संस्कृति की झांकी इसमें दी गयी है। भारत वर्ष की संस्कृति का व्यक्तित्व देश और काल की सीमा लाँघने वाला है। चित्तवृत्तियों के संस्कार के द्वारा जीवन की वास्तविकता को समझ लेना ही हमारी संस्कृति का लक्षण है। हमारा साहित्य भी इस विचारधारा से अनुप्राणित है। दुनिया का उद्धार भारतीय संस्कृति के उद्धार और प्रसार में निहित है। पाशविकता की जगह अहिंसा और प्रेम का स्रोत भारतवर्ष ने ही प्रवाहित किया है। अतएव यहाँ का प्रत्येक परमाणु ''लोकाः समस्तः सुखिनो भंवतु'' से

मुखरित है। भारतीय संस्कृति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण वैशिष्टय यही है।

द्विवेदी जी द्वारा रचित 'कुटज'[12] ललित निबन्ध है, जिसे भावात्क एवं चित्रमय शैली में प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने 'कुटज' नामक पर्वतीय पौधे के बहाने मानव के जीवन के लिए आदर्श संकेतों की खोज की है। अपने आस–पास की प्रकृति, फूलों, वृक्षों के जैसे जीवन्त रूप में द्विवेदी जी ने देखा और उसके महत्व की व्याख्या की है, वह आधुनिक पर्यावरण सजगता को पूरी तरह पूर्वाशित करता है।

'देवदारू'[13] द्विवेदी जी का एक आत्मपरक ललित निबन्ध है। इसमें सरसता, भाव–प्रवणता, रोचकता, पाण्डित्य, मन की उन्मुक्तता और ज्ञान की अगाधता विद्यमान है। इस निबन्ध में एक ओर संस्कृत साहित्य की विपुल ज्ञान राशि छितराई है तो दूसरी ओर लोक जीवन की सरसता भी विद्यमान है।

यही कारण है कि निबन्ध की भाषा एक ओर संस्कृतनिष्ठ है तो दूसरी ओर लोकभाषा के शब्दों के प्रयोग निपरवाह हुए हैं।

द्विवेदी जी के निबन्धों में विषय–निरूपण पद्धति सम्बन्धी विशेषताओं का आंकलन करते समय निम्नलिखित बातें कही जा सकती हैं –

1. निजी जीवन के अनुभवों से सम्बद्ध प्रसंगों की अवतारणा।
2. कौतूहलपूर्वक शीर्षक से प्रारम्भ।
3. विषय के जटिल गूढ़ प्रसंगों का धीरे–धीरे प्रकाशन।
4. विचारों की एकतानता (अंत तक आते–आते) का आभास।
5. सम्पूर्ण विषयों का सम्पूर्ण बिम्ब–निर्माण।
6. आवश्यकता पड़ने पर शास्त्र–चर्चा, किन्तु दुरूपयोग नहीं।

द्विवेदी जी का भाषा पर असाधारण अधिकार है। व्यावहारिकता को दृष्टि में रखते हुए आपने प्रायः उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों का भी निस्संकोच प्रयोग किया है। वाक्यों में कसाव है तथा कहीं भी शिथिलता दृष्टिगोचर नहीं होती। द्विवेदी जी की शैली में पर्याप्त मौलकता ही उसमें कठोरता के स्थान पर सहजता तथा सहानुभूति है। आपके ललित निबन्धों की भावात्मक शैली में वाक्य छोटे एवं भाषा सरल होती है किन्तु विवेचनात्मक अथवा तार्किक शैली का जहाँ भी प्रयोग हुआ है, वाक्य अपेक्षाकृत लम्बे तथा भाषा क्लिष्ट होती गई है।

द्विवेदी जी के ललित–निबन्ध गद्य गीत का आनन्द तो देते हैं, उनमें भारतीय दर्शन, धर्मशास्त्र, ज्योतिष एवं पुराणों का सार भी भरा रहता है। ललित निबन्ध प्रायः भाषा को खिलौना बनाकर लिखे जाते हैं, पर द्विवेदी जी ने गम्भीरता, वैज्ञानिकता, भारतीयता आदि की रक्षा करते हुए ललित निबन्धों की रचना की है और भाषा को दुर्बोध नहीं होने दिया है। संस्कृत का गम्भीर अपवाद द्विवेदी जी की विचारधारा को संकुलित करने में सफल नहीं हुआ है। अपने ललित निबन्धों में द्विवेदी जी ने तार्किकता के साथ आधुनिकता, वैज्ञानिकता एवं भारतीयता का सफल तथा आश्चर्यजनक निर्वाह किया है। वे अपनी विद्वता को पाठक के लिए आतंक नहीं बनने देते। लगता है कि कोई अधिक जानकार सहयात्री मेरे विचारों और भावों को सम्पन्न बनाता हुआ अग्रसर हो रहा है। लेखक का पाठक से कहीं साथ नहीं छूटता है चाहे वह विचारों की गहनता हो, अनुसंधान का रूझान हो अथवा भाषा की तरंग हो।

वस्तुतः हम कह सकते हैं कि उच्च स्तरीय ललित निबन्धकारों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मूर्धन्य स्थान है। उनके निबन्ध अनेक विधाओं के ज्ञान के भण्डार हैं। इनमें इतिहास, पुरातत्व, ज्योतिष, दर्शन और शास्त्रों का

सुगम सार–संग्रह है। इसमें ज्ञान गरिमा के साथ लालित्य का उन्होंने अद्‌भुत योग किया है। देश–प्रेम और मानव–प्रेम का व्यापक चित्र उनके साहित्य के पटल पर अंकित है। निश्चय ही ललित निबन्ध के क्षेत्र में वे युग प्रवर्तक लेखक हैं।

संदर्भ सूची

1. डॉ. आर. पी. चतुर्वेदी – ललित निबन्ध चौथा संस्करण 1989, पृ. 237
2. डॉ. रामचन्द्र शुक्ल – हिन्दी साहित्य का इतिहास, 35वां संस्करण सं. 2056 वि., पृ. 276
3. डॉ. तिलकराज शर्मा – निबन्ध सरोज – 8वां संस्करण, वर्ष 2000, पृ. 83
4. डॉ. कैलाशचन्द्र शर्मा – नव निबन्ध तीसरा संस्करण 1995, पृ. 59
5. हिन्दी साहित्य कोश, पृ. 128
6. डॉ. रामकिशोर शर्मा – हिन्दी साहित्य का इतिहास तृतीय संस्करण, पृ. 407
7. डॉ. नगेन्द्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, वर्ष 1994, पृ. 693
8. डॉ. हरिनाथ द्विवेदी – सिद्धान्त और प्रयोग तीसरा संस्करण 1993, पृ. 79
9. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – जीवेम शरदः शतम् – नामक निबन्ध
10. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – शिरीष के फूल – नामक निबन्ध
11. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – भारतीय संस्कृति की देन – नामक निबन्ध
12. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – कुटज – नामक निबन्ध
13. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – देवदारू – नामक निबन्ध

Copyright © 2017, Dr. Shams Aalam. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.